ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

भारतीय कृषि व्यवस्था पर ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रभाव

सर्वेश्वर राम मिश्रा
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
डी0 ए0 वी0 कॉलेज, कानपुर
सह प्रशान्त दीक्षित
वी0एस0एस0डी0 कालेज, कानपुर

भारतोयों का प्रमुख कार्य प्रारम्भ से ही खेती करना था। भारत की 8.3 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है और 69.8 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर थी। भारतीय कृशकों की स्थिति यूरोपीय सभ्यता से बिल्कुल अलग थी, भारत में ऐसा कोई भी वर्ग नहीं था जिसको कि जमीन पर पूर्ण अधिकार प्राप्त हो। ''भारत की भूमि, जनजाति या ग्राम, समुदाय, गोत्र और बिरादरी की होती थी यह कभी–भी सम्राट की सम्पत्ति नहीं समझी गयी।''[1] सम्राट भूमि का मालिक न होने के कारण भारत में किसी भी उच्च वर्ग का जन्म नहीं हो सकता जिसका कि जमीन पर अधिकार हो। ''जमीन का स्वामित्व किसानों के अतिरिक्त अन्य किसी के अधिकार में नहीं था, न तो सामंतियों के काल में और न ही सम्राटों के काल में था।''[2] दश में सम्राट के सामंतियों को सिर्फ इतना अधिकार था कि वे गावों से कर प्राप्त कर सकता था। सामंती गावों का केवल तहसीलदार होता था, जिसका प्रमुख कार्य कर वसूली का होता था। भारतीय शासन में विभिन्न कार्यप्रणालियों के द्वारा भूमि–कर का निर्धारण एवं उसकी प्राप्ति की प्रक्रिया थी। ''सभी सरकारों का पशासनिक ढाचा करके निर्धारण एवं कर की वसूली से सम्बन्धित था। इस कारण देश के प्रशासनिक एवं वित्त के इतिहास के निर्माण में कर–प्रणाली एवं इसको कार्यान्वित करने का ढ़ंग सबसे अधिक महत्वपूर्ण था। 19वीं भाताब्दी के अन्त तक भारत में कृषि देश की आर्थिक स्थिति की सबसे महत्वपूर्ण आधार थीं। किसानों एवं उत्पादन के भाग्य का आधार कल लगान की मात्रा का निर्धारण एवं उसकी वसूली था।''[3] भारत में किसानों की अच्छी स्थिति का श्रेय प्रशासन को ही था। जब कर साधारण मात्रा में लिया जाता था तो प्रशासन को उदार तथा जनता का हितकर माना जाता था और जब इसमें आवश्यकता से अधिक वृद्धि कर दी जाती थी तो प्रशासन को क्रूर एवं अत्याचारी कहा जाता था।

भारत में बादशाहों के काल में जो भी आव" यक परिवर्तन किये जाते थे उनका भारतीय कृषि व्यवस्था व उसके उत्पादन पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता था। यद्यपि उस समय भी रूपयों – पैसों के द्वारा कर देने की प्रणाली आरम्भ की गयी थी, लेकिन भूमि का वास्तविक अधिकारी ग्राम समुदाय ही था। मध्यकाल में अनेक शासकों ने कृषि को उन्नत करने के लिए नहरें, बाध, यातायात के लिए सड़कों एवं राजमार्गों का निर्माण कराया एवं अकाल के समय भूमि–कर माफ दिया जाता था। ''अंग्रेजों की भारत पर सफलता प्राप्ति के समय तक कुल मिलाकर

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

भारत की आर्थिक स्थिति बिल्कुल ठीक थी। इस समय तक सभी जातियों के लोगों को रोजगार के समान अवसर प्राप्त थे आत्मनिर्भर ग्राम समाज था जहाँ पर भिन्न भिन्न वर्गों के लिये वशानुगत काम–काज थे।''[4] जबकि दूसरी ओर प्राक् ब्रिटिश भारत में किसी भी किसान का जमीन पर कोई हक नहीं था।

अंग्रेजों क भारत पर सफलता के उपरान्त ही प्राचीन भूमि व्यवस्था में परिवर्तन होने प्रारम्भ हो गये। ''किसी भी देश की आय के प्रमुख आधार कृषि, वाणिज्य एवं वित्तीय प्रशासन ही होते हैं जिन पर अंग्रेजी सरकार ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। अंग्रेजी सरकार ने भारत को शान्ति अवश्य प्रदान की, परन्तु उन्होंने भारत में राष्ट्रीय सम्पत्ति के इन सभी स्रोतों को प्रगतिशील बनाने का कोई भी प्रयास नहीं किया।''[5] अंग्रेजों ने किसानों का भूमि पर से व्यक्तिगत अधिकारों को समाप्त कर दिया। अंग्रेजों ने एक तरफ लगान की वसूली में स्थिरता लाने के लिए तथा दूसरी तरफ लगान वसूली से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के लिए लगान की पद्धतियों को आरम्भ किया, जिसके फलस्वरूप भारतीय इतिहास में पहली बार निजी सम्पत्ति व व्यक्तिगत स्वामित्व के सिद्धान्त का जन्म हुआ। बंगाल तथा वर्तमान उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में इंग्लैण्ड के भू–स्वामियों की तरह के वर्ग का प्रादुर्भाव हुआ। उस समय के जमींदार जो कि मुगल प्रशासन के समय सिर्फ राजस्व वसूली का कार्य करते थे, अब इस लगान व्यवस्था के कारण इन जमीनों के वास्तविक स्वामी बन गये।

1875 ई0 में वारेन हेस्टिंग्स के पश्चात लार्ड कार्नवालिस भारत का गवर्नर जनरल नियुक्त हुआ। लार्ड कार्नवालिस स्वयं ही इंग्लैण्ड क एक जमींदार परिवार से आया था। अतः वह भूमि सम्बन्धी कार्यप्रणालियों में विशेष" रूचि रखता था। लार्ड कार्नवालिस ने अपने कार्यावली में लिखा था – ''हम सभी का मुख्य कर्तव्य यह है कि सरकार के हितों को नुकसान पहुँचाने वाली समस्याओं का समाधान ठीक प्रकार से किया जाये तथा एक निश्चित लगान के बदले भूमि पर स्थायी रूप से अधिकार होना चाहिए, जिससे कि हम भारतवासियों को सम्पन्न एवं खुशहाल बना सकें।''[6]

स्थायी बन्दोबस्त –

सन् 1793 ई0 में लार्ड कार्नवालिस ने बंगाल, बिहार व उड़ीसा के प्रान्तों में ''स्थायी बन्दोबस्त'' का आरम्भ किया। इस स्थायी बन्दोबस्त के जरिए भारत में जमीदारों का भी जन्म हुआ। ''स्थायी भूमि व्यवस्था के आधार पर पारम्परिक जमींदारों को एवं राजस्व वसूलकों को भू–स्वामियों में परिणित कर दिया गया।''[7] अब वे सम्पूर्ण जमीन के स्वामी बन गये। स्वामित्व का अधिकार 'आनुवांशिक' तथा स्थानान्तरणीय बना दिया गया। जमींदारों द्वारा वसूल किये जाने वाल कुल लगान का 90 प्रतिशत भाग सरकार को देना पड़ता था और शेष 10 प्रतिशत पर उनका अधिकार होता था।

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

प्रारम्भ में लगान का निर्धारण जमींदारों की आज्ञा के बिना निरकुंश ढंग स किया गया, ''क्योंकि अंग्रेज कर्मचारियों और अधिकारियों का उद्देश्य अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना था, जिसके कारण राजस्व की दर को अधिक रखा गया था।''[8] सर जॉन थोर, जिसने स्थायी बन्दोबस्त की योजना को जन्म दिया था, ने गणना करके बताया था अगर कुल उत्पादन 100 प्रतिशत हो तो 9/10 भाग अंग्रेजी सरकारो और 1/1 भाग जमींदारों को मिलाना चाहिए।

लार्ड कार्नवालिस के इस स्थायी बन्दोबस्त का सबसे बुरा प्रभाव किसानों पर पड़ा था। ''कुछ मतलबी जमींदारों ने भूमि कर स्थायी होने के कारण किसानों पर मनमाने ढंग से अत्याचार करने लगे। जमींदार किसानों से भूमि कर के अतिरिक्त ''मद्योटे'' नामक कर भी लेने लगे और उनके सहयोगी भी खेती करने वालों से भत्ता प्राप्त करने लगे थे।''[9] लार्ड विलियम बैटिंक ने इस व्यवस्था के सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत करते हुये कहा था, ''यह ठीक है कि स्थायी बन्दोबस्त अपने कई मामलों को सुलझाने में पूर्णतयः असफल रहा, लेकिन फिर भी इसका सबसे महत्वपूर्ण फायदा यह था कि इस बन्दोबस्त के कारण भू–स्वामियों के एक ऐसे दल का जन्म हुआ जिसे अंग्रेजी भाासन से लाभ प्राप्त था और जिसका साधारण जनता पर पूर्ण नियन्त्रण था।''[10] कालान्तर में अंग्रेजी सरकार को इसी जमींदार वर्ग का पूर्ण सहयोग प्राप्त था। ''परन्तु जब कम्पनी को जमींदारों से प्राप्त निश्चित स्थायी कर लाभप्रद साबित नहीं हुआ तो उन्होंने जमीन पर अस्थायी भूमि व्यवस्था लागू कर दी।''[11] इस अस्थायी कर व्यवस्था से भूमि के स्वामी तो जमींदार ही थे। लेकिन ''ब्रिटिश सरकार की कृषि नीतियों के फलस्वरूप राजस्व का अधिकार समय–समय पर बदलता रहता था।''[12] यह अस्थायी बन्दोबस्त बंगाल, बम्बई के कुछ क्षेत्रों एवं मध्य प्रदेश और पंजाब में प्रारम्भ किया गया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत जमींदारों ने किसानों पर अनेकों अत्याचार किये और किसान धीरे–धीरे उनके दास बनने पर मजबूर हो गये। परिणाम स्वरूप कृषि की उन्नति एवं विकास के लिए कोई स्थान शेष नही था। उत्पादन की मात्रा दिन–प्रतिदिन क्रमशः घटती चली गयी और सम्पूर्ण देश में अकाल की स्थिति पैदा हो गयी। इस प्रकार ''लार्ड कार्नवालिस अपने शासन काल में देश में दुर्दशा व अकालों की एक लम्बी श्रंखला छोड़कर चला गया था।''[13]

रैय्यतदारी बन्दोबस्त –

बंगाल में भू–स्वामियों के वर्ग को पैदा करने वाली गलतियों को न दोहराते हुये मद्रास के गवर्नर सर टॉमस मुनरो ने मद्रास तथा बम्बई के प्रान्तों में 1792 ई0 में रैय्यतदारी व्यवस्था लागू की। **''रैय्यतदारी व्यवस्था में किसानों को ही उस भूमि का स्वामी माना गया जिस पर वह कृषि करता था।''**[14] इस व्यवस्था में कर भी प्रत्यक्ष रूप से किसानों से ही प्राप्त किया जाता था। सर टॉमस मुनरों ने सर्वप्रथम 1820 ई0 में मद्रास के बड़ा महल जिलें में इस व्यवस्था की शुरूआत की, तत्पश्चात् यह बम्बई, सिन्ध, बरार, मद्रास, आसाम आदि प्रान्तों में भी लागू की गयी।

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

यद्यपि रैय्यतदारी व्यवस्था भी जमींदारी व्यवस्था से अधिक भिन्न नहीं थी ''वस्तुतः किसान इस व्यवस्था के कारण भूमि का वास्तविक स्वामी बन जाता था और अपनी ही भूमि पर लगान देता था। 19वीं भाताब्दी में लगान का भार कम होने के कारण उनकी स्थितिया में भी बदलाव आया।''[15] **सर टॉमस मुनरो** ने 1792 ई0 में किसानों से कुल उपज का 50 प्रतिशत लगान लेना निश्चित किया लेकिन लगान की मात्रा अधिक होने की वजह से किसानों की स्थिति गिरने लगी। इस कारण 1807 ई0 में लगान की मात्रा 33 प्रतिशत निश्चित कर दी गयी। ''परन्तु यह लगान की मात्रा भी किसानों के लिए अधिक थी क्योंकि लगान गाँव की समस्त भूमि को आधार मानकर वसूल किया जाता था। फसल चाहे अच्छी हो या बुरी अधिक भूमि पर खेती हुयी हो, लगान एक निश्चित मात्रा में देना पड़ता था।''[16] जिससे कि किसानों की स्थिति और भी खराब हो गयी और लगान न दे पाने की स्थिति में उन्हें भूमिहीन कर दिया जाता था। अतः किसान समय–समय पर अपने स्थानीय महाजनों से ऋण लेते थे, इस कारण वे उनके कर्जदार बनते गय। ''भारत में रैय्यतदारी व्यवस्था को यहाँ का समर्थन भी प्राप्त था क्योंकि यह भारतीय संस्कृति से थोड़ा बहुत मिलती जुलती थी लेकिन फिर भी इस व्यवस्था के अन्तर्गत भूमि का निजीकरण कर दिया गया और लगान फसल को आधार न मानकर भूमि के नाप के आधार पर निर्धारित किया गया। इस व्यवस्था ने जमींदारी प्रथा की तरह कृषकों का शोषण ही किया।''[17] इस व्यवस्था के फलस्वरूप किसान निर्धनता व ऋण के भार से दुःखी ही रहे।

महलवारी व्यवस्था –

उत्तरी भारत के प्रदेशों में रहने वाले जमींदारों तथा ग्राम पंचायतों के पास जो भूमि थी उसे ''महल'' कहते थे। और अंग्रेजी सरकार ने प्रत्येक महल के आधार पर भूमि कर निश्चित किया था। अतः इस व्यवस्था को ''महलवारी व्यवस्था'' के नाम से पुकारा गया। यह व्यवस्था सन् 1882 ई0 में गंगा – घाटी, उत्तर–पश्चिमी प्रान्तों, पंजाब व मध्य भारत के कुछ स्थानों में लागू की गयी थी। कलेक्टरों ने प्रत्येक महल पर 83 प्रतिशत भूमि कर निर्धारित किया था और जब जमींदारों व ग्राम पंचायतों का वास्तविक लाभ 20 प्रतिशत से अधिक हो तो भूमि कर में वृद्धि करने का अधिकार दिया गया।

महलवारी व्यवस्था के अन्तर्गत जमींदारों के अलावा ग्राम पंचायतों को भी महत्व दिया गया जोकि अन्य व्यवस्थाओं में नहीं था। यद्यपि इस व्यवस्था में भूमि कर की मात्रा निश्चित कर दी गयी थी, लेकिन कोई भी ऐसा उपाय प्रयोग में नहीं लाया गया जिससे किसानों की स्थिति में सुधार हो सके। अधिक भूमि कर की वजह से किसान व जमींदारों की स्थिति धीरे–धीरे दयनीय हो गयी। ''उत्तरी भारत में भूमि कर लोगों की उन्नति के मार्ग में बाधा बन गयी और भूमि कर की एक निश्चित मात्रा भी न थी।''[18] 1833 ई0 में इस व्यवस्था में अनेकों कमियाँ होने के कारण लार्ड विलियम बैंटिक ने इसे समाप्त कर दिया और 30 वर्शों तक के लिये भूमि कर 1/3 भाग निश्चित कर दिया।

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

इस प्रकार अंग्रेजों की भारत पर विजय के उपरान्त देश के कृषि क्षेत्र में जबरदस्त क्रान्ति आयी। अंग्रेजों ने भूमि का निजीकरण करके कृषि के पूँजीवाद को बढ़ावा दिया जिसके कारण भारत के पूँजीवाद सामंतियों की जड़े हिल गयी। ''भारत के इतिहास में सन् 1790 और 1940 के मध्य के अतिरिक्त कोई दूसरा ऐसा युग नहीं था, जिसमें घनी जोतदारों का इतना विशाल, सुरक्षित एवं सुसंगठित दल देखने को मिला हो।''[19] हमारे देश की कृषि व्यवस्था पर ब्रिटिश उपनिवेशवाद का प्रभाव आधुनिकता का प्रतीक नहीं था बल्कि इसने अर्थ सामंतवादी संबंधों को उजागर किया। ''अंग्रेजों के भूमि कर की अनिश्चित मात्रा कृषि पर अधिक दुश्कर साबित हुयी। अगर इस प्रकार की नीतियों को विश्व के किसी भी देश में प्रयोग किया जाये तो कृषि की अवनति ही होगी।''[20] अतः अंग्रेजों की भूमि व्यवस्था व कर नीति के कारण भारतीय कृषि एवं कृषकों की स्थिति अत्यन्त गिरी हुयी अवस्था में थी।

कृषि का उत्पादन एवं अकालों की स्थिति –

''यद्यपि अंग्रेजों ने भारतीय कृषि का राष्ट्रीयकरण तो किया किन्तु यह भारतीयों के लिये बहुत ही प्रगतिशील एवं लाभकार साबित नहीं हुआ।''[21] किसानों की आर्थिक स्थिति में भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ। अंग्रेजों द्वारा निर्मित की गयी नहरें भारत की कच्चें कुओं की तुलना में कम अनुकूल थी और कभी–कभी तो उनमें दलदल और खारेपन की समस्या भी उत्पन्न हो जाती थी। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि ''कृषि वाणिज्यीकरण के फलस्वरूप इंग्लैण्ड में कच्चे माल की आवश्यकता की पूर्ति हेतु यहाँ कपास, गन्ना, पटसन और तिलहन के उत्पादन पर अधिक जोर दिया गया जिससे गेहूँ, ज्वार, बाजरा, दालों इत्यादि का उत्पादन क्रमशः घटता चला गया।''[22] दूसरी ओर जब ''यूरोप के देशों में पूजीवादी लोगों द्वारा, कृषि के लिए सुसंगठित फर्मों का उद्भव हुआ तब भारत में अंग्रेजों ने ऐसी किसी भी कार्यप्रणाली को कार्यान्वित नहीं किया। स्वामित्व और निजीकरण के कारण भूमि एक सी रही, लेकिन भूमि व्यवस्था से होने वाले नुकसान पहले की तरह होते रहें।''[23] अतः संगठन एवं उत्पादन दोनों ही प्रकार से कृषि की अवनति ही हुयी।

अंग्रेजी सरकार द्वारा भूमि कर की राशि को इंग्लैण्ड भेज देने के कारण तथा कृषि के लिए सिंचाई का प्रबन्ध न कर सकने के कारण देश में लगातार अकाल पड़ना प्रारम्भ हो गये। ''19वीं भाताब्दी में देश के अनेक भागों में कई अकाल पड़े जिससे कि करोड़ों की संख्या में लोग मर गये। ब्रिटिश शासन के सिवाय इतनी बड़ी मात्रा में जान–माल की हानि किसी अन्य शासक को शासन काल में नहीं हुयी थी।''[24] 1870–80 के मध्य के समय में पड़े अकालों की संख्या की एक विस्तृत श्रंखला है। अंग्रेजी भाासन के पूर्व के शासकों के समय में 33 वर्श में मात्र एक अकाल पड़ता था जबकि ब्रिटिश शासन काल में तीन वर्श में एक अकाल पड़ता था।''[25] सन् 1860 ई0 में अकाल के कारण 5 लाख व्यक्तियों की जाने गयी। सन् 1868–70 ई0 में पश्चिमी उत्तर प्रदेश, बम्बई व पंजाब में 14 लाख लोग अकाल की

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

चपेट में आ गए। भारत के इतिहास में सबसे बड़ा अकाल 1976–78 के मध्य पड़ा था, जिसमें महाराष्ट्र में 8 लाख, मद्रास में 35 लाख, उत्तर प्रदेश में 12 लाख और मैसूर की कुल जनसंख्या में सी 20 प्रतिशत से भी अधिक ज्यादा लोगों की जाने चली गयी। ''भारत में सन् 1921 की जनगणना के अनुसार भारतीय जनसंख्या में नाममात्र की वृद्धि हुई।''[26]

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ो में)
1891 ई0	28.2 करोड़
1901 ई0	28.5 करोड़
1911 ई0	30.3 करोड़
1921 ई0	30.6 करोड़

उपर्युक्त आंकड़ो से यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि भारत में गरीबी का मुख्य कारण अधिक जनसंख्या तो हो ही नहीं सकता।

उत्पादन के आधार पर कृषि की अवस्था बहुत ही पिछड़ी हुई थी सन् 1893–96 के समय को आधार मानकर 1936 से 1946 खाद्यान्न, वाणिज्यिक एवं कुल उत्पादन इस प्रकार था।[27]

वर्ष	खाद्यान्न फसलें	वाणिज्यिक फसलें	कुल उत्पादन (लाख टन)
1993–96	100	100	73.9
1906 –16	99	126	74.0
1926 – 36	94	171	60.6
1936 – 46	93	185	60.3

''1900–05 से 935–40 तक के समय में नकद फसलों का प्रति एकड़ मूल्य 36.7 रूपयो से बढकर 37.9 रूपयों की नाममात्र की वृद्धि हुई, दूसरी ओर खाद्यान्न फसलों के मूल्य 25.4 रूपयों से घटकर 22.7 रूपये हो गया और सभी फसलों का मूल्य 27.6 रूपयों से घटकर 26.3 रूपये ही शेष रह गया।[28]

किसानों की स्थिति दयनीय होने के कारण भारतीय कृषि व्यवस्था में सधार का कोई भी प्रयास सम्भव न हो सका। ब्रिटिश सरकार ने भी किसानों को किसी भी प्रकार की सुविधा नहीं प्रदान की। यदि गौर किया जाये तो अंग्रेजी सरकार ने कृषि शिक्षा की ओर उचित ध्यान ही नहीं दिया था। इस कारण भारत की कृषि व्यवस्था बहुत ही पिछड़ गयी है। यही कारण है कि जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो उसे विदेशों से अनाज आयात करना पड़ा। कृषि और कृषक दोनों के ही निम्न स्तर के लिए ब्रिटिश सरकार ही जिम्मेदारी थी।

ISSN-2394-6326
Journal de Brahmavart

संदर्भ ग्रंथः

1 मुखर्जी, राधा कमल : लैण्ड प्राब्लम्स इन इंडिया (1933) पृष्ठ सं0 – 16
2 मुखर्जी, राधा कमल : लैण्ड प्राब्लम्स इन इंडिया (1933) पृष्ठ सं0 – 36
3 दत्त, रामे" ा : भारत का आर्थिक इतिहास, भाग–1, पृष्ठ संख्या – 15
4 चोपड़ा, पुरी, दास : भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास, पृष्ठ सं0 – 168
5 दत्त, रोमेश : भारत का आर्थिक इतिहास, भाग–1, पृष्ठ सं0 – 12
6 दत्त, रोमेश : भारत का आर्थिक इतिहास, भाग–1, पृष्ठ सं0 – 39–40
7 देसाई, ए0आर0 : भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ सं0 – 31
8 सरकार, सुमित : आधुनिक भारत, पृष्ठ सं0 – 53
9 दत्त, रोमेश : भारत का आर्थिक इतिहास, भाग–1, पृष्ठ सं0 – 17
10 कीथ, ए0बी0 : भारत का संवैधानिक इतिहास, खण्ड–1, पृष्ठ सं0 – 215
11 देसाई, ए0आर0 : भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ सं0 – 53
12 सरकार, सुमित : आधुनिक भारत, (1885–1947), पृष्ठ सं0 – 253
13 डा0 ताराचन्द : भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, पृष्ठ सं0 – 253
14 देसाई, ए0आर0 : भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृष्ठ सं0 – 32
15 धर्म कुमार : लैण्ड एण्ड कॉस्ट इन साउथ इंडिया, पृष्ठ सं0 – 85
16 दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, (1740) पृष्ठ सं0 – 207
17 दत्त, आर0पी0 : आज का भारत, (1740) पृष्ठ सं0 – 213
18 दत्त, आर0सी0 : भारत का आर्थिक इतिहास, भाग–2, पृष्ठ सं0 – 133
19 थार्नर, डेनियल : लैण्ड एण्ड लेबर इन इण्डिया, पृष्ठ सं0 – 109
20 दत्त, आर0सी0 : भारत का आर्थिक इतिहास, भाग–2, पृष्ठ सं0 – 10
21 सरकार, सुमित : आधुनिक भारत, (1885–194) पृष्ठ सं0 – 56
22 डा0 ताराचन्द : भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, खण्ड–3, पृष्ठ सं0 – 51
23 भोवलंकर, के0एस0 : भारत की समस्यायें, (1940) पृष्ठ सं0 – 105–107
24 डा0 आर्शावादी लाल : मध्यकालीन भारतीय इतिहास, भाग–2, पृष्ठ सं0– 338
25 महाजन, बी0डी0 : आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0 – 744
26 सरकार, सुमित : आधुनिक भारत, पृष्ठ सं0 – 57
27 डा0 ताराचन्द : भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, पृष्ठ सं0 – 57
28 बागची, ए0के0 : प्राइवेट इनवेस्टमेन्ट इन इंडिया, पृष्ठ सं0 – 50